5 हिंदुस्तानी संगीत में राग पद्धति का क्रमिक विकास

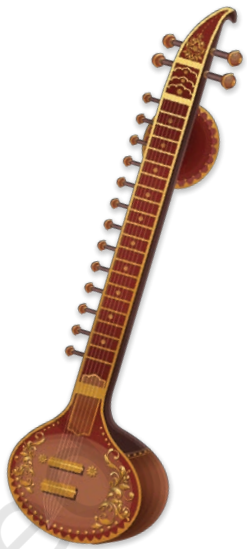

भारतीय शास्त्रीय संगीत में राग का क्रमिक विकास

भारतीय शास्त्रीय संगीत के प्रदर्शन हेतु राग गाने की विधि को सर्वसम्मति से महत्वपूर्ण माना गया है। यह मान लेना बहुत ही अनुचित है कि राग क्लिष्ट नियमों से बँधे होने के कारण गतिशील नहीं हो पाता। राग में अपरिसीम क्षमता है, लेकिन कुछ आधार नियमावली भी हैं, जैसे— शुद्ध एवं कोमल स्वर, विशिष्ट स्वर, आरोह-अवरोह, वादी-संवादी, जाति, आलाप, तान, वर्जित स्वर, ताल, लय, कण, मींड इत्यादि। हर राग का स्वरूप अलग होता है और इस कारण हर राग का चलन भिन्न होता है। इस गतिशीलता के कारण हज़ारों साल से रागों का पठन-पाठन व विकास होता रहा है। विकास के साथ राग गायन ने लोगों का मनोरंजन तो किया ही, संस्कृति और रुचिपूर्ण ध्वनियों के साथ समाज को रंजकता भी प्रदान की है। मतंग मुनि ने अपने ग्रंथ *बृहद्देशी* में राग की स्पष्ट परिभाषा देते हुए लिखा है—

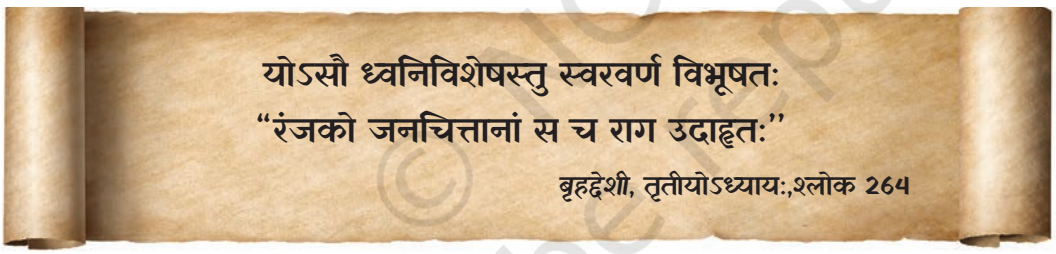

योऽसौ ध्वनिविशेषस्तु स्वरवर्ण विभूषत:
"रंजको जनचित्तानां स च राग उदाहृत:"

बृहद्देशी, तृतीयोऽध्याय:,श्लोक 264

अर्थात् जो ध्वनि मनुष्य के चित्त का रंजन करती है उसे ही 'राग' कहा गया है।

राग में नियमित स्वर एवं विविध स्वर समूह होने के कारण अलग-अलग छवि चित्रित होती है। उदाहरणार्थ राग भैरवी के स्वर निम्नलिखित हैं—

आरोह स रे ग म प ध नि सं
अवरोह सं नि ध प म ग रे स

एक राग के नियमित स्वरों से बनाए गए विविध स्वर समूहों के माध्यम से असंख्य रचनाएँ भिन्न-भिन्न सांगीतिक गेय विधाओं के रूप में प्रकाशित होती हैं। इन गेय विधाओं को निम्न रूप में वर्गीकृत किया गया है—

- शास्त्रीय संगीत में ध्रुपद, धमार, विलंबित ख्याल, द्रुत ख्याल इत्यादि।
- उपशास्त्रीय संगीत में ठुमरी, दादरा, कजरी इत्यादि।

© NCERT not to be republished

- लोक संगीत में विभिन्न प्रदेशों के गीत, उनकी विशिष्ट बोलियों के साथ।
- सुगम संगीत में जीवन के विविध भावों से युक्त गीत, भजन, सामाजिक क्रियाकलापों से युक्त शिक्षाप्रद गीत, गज़ल आदि।

विविध शैलियों में जब हम विभिन्न रचनाओं का अध्ययन करते हैं तब राग के विस्तृत क्षेत्र को जान पाते हैं। तब ही हमें असंख्य गीत, धुनें, बंदिशें इत्यादि रागों के विभिन्न स्वरों के ढाँचे पर बनी हुई दिखती हैं।

हमारी संस्कृति में जब भी हम प्राचीन संगीत शिक्षा का प्रसंग लेते हैं तो सर्वप्रथम वेदों का उल्लेख करते हैं। संगीत के संदर्भ में *सामवेद* एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक कड़ी मानी जाती है जो लगभग पाँच हज़ार वर्ष पूर्व रचा गया था। वैदिक काल से ही ध्वनि पर गंभीर चिंतन हुआ जिसका स्वरूप *सामवेद* में देखने को मिलता है। *सामवेद* में विविध स्वर संख्या प्रयोगों से युक्त गायन ने भिन्न-भिन्न संज्ञाएँ प्राप्त की थीं यथा—

आर्चिक	— एक स्वर	गाथिक	— दो स्वर
सामिक	— तीन स्वर	स्वरान्तर	— चार स्वर

ऋग्वेद साहित्य का प्राचीनतम ग्रंथ है जिसमें गीत, वाद्य तथा नृत्य तीनों कलाओं का उल्लेख मिलता है। गीत के लिए गीत, गातु, गाथा, गायन शब्द का प्रयोग हुआ है। इसी ग्रंथ के कुछ मंत्रों अर्थात ऋचाओं के गेयात्मक स्वरूप का संग्रह *सामवेद* के रूप में हुआ।

वैदिक काल में राग परंपरा या राग शब्द का कहीं उल्लेख नहीं मिलता लेकिन साम गान को गाने की विधि में राग के अनेक तत्व पाए जाते हैं। यज्ञ के समय मंत्रोच्चारण हेतु नियमित स्वर समूह थे। इसके अलावा जिस तरह आज षड्ज या स राग में अनिवार्य है (क्योंकि यह आधार स्वर माना जाता है) उसी प्रकार वैदिक युग में मंत्र उच्चारण से पहले 'हुम्' का उच्चारण किया जाता था। वैदिक युग में उद्गाथा, प्रस्तोता और प्रतिहर्ता ये तीनों मिलकर संगीतमय मंत्रोच्चारण करते थे लेकिन सभी आधार स्वर हुम् पर ठहरकर मंत्र उच्चारण की विधि को संपूर्ण करते थे।

?

1. किसी भी राग में किन नियमावलियों का पालन किया जाता है?
2. मतंग मुनि ने *बृहद्देशी* ग्रंथ में किस तरह राग की परिभाषा दी है?
3. संगीत में गेय विधाओं के उदाहरण बताइए।
4. *सामवेद* में विविध स्वर प्रयोग से युक्त गायन में दिए गए नामों का स्मरण कीजिए।
5. वैदिक काल में संगीतय मंत्रोच्चारण की प्रथा कौन निभाते थे?

वैदिक काल के उपरांत रामायण एवं महाभारत के समय के गीत, वाद्य एवं नृत्य को समाज का अभिन्न अंग माना जाता था। इन ग्रंथों की रचना शक संवत 600 से 200 ईसा पूर्व मानी गई है।

© NCERT not to be republished

रामायण में जाति गायन का उल्लेख है जो विभिन्न स्वर-समूह का द्योतक है। *रामायण* में दो प्रकार की जातियों का उल्लेख मिलता है—

- **पाठ्य जाति**— जो पठन के लायक हो।
- **स्वर जाति**— जो विविध स्वर रचनाओं से गाई जाने वाली हो।

रामायण काल में ग्राम राग में विभिन्न जातियों को गाने की प्रथा थी। निश्चित श्रुति के अंतरालों पर स्थापित किए गए सात स्वरों को 'ग्राम' कहा जाता था। विभिन्न स्वरावली के प्रयोग से नियमित शृंखला बनाते हुए गीत (जिसको विभिन्न नामों से जाना जाता है) या धुनों को गाने-बजाने की प्रथा 'जाति' में निहित थी। जाति के संबंध में भरत ने कहा है कि श्रुति ग्रहस्वरादि समूहज्जायंते इति जातय: अर्थात श्रुति, ग्रह, स्वर आदि के समूह से जाति की रचना होती है। *नाट्यशास्त्र* में जाति के 10 लक्षणों का उल्लेख निम्न श्लोक में पाया जाता है—

"ग्रहांशौ तारमंद्रौ च न्यासोपन्यास एवं च।
अल्पत्व च बहुत्व षाडवौडविते तथा।।"

नाट्यशास्त्र, 28/102

अर्थात ग्रह, अंश, तार, मंद्र, न्यास,अपन्यास, अल्पत्व, बहुत्व, औडवत्व तथा षाडवत्व जाति के दस लक्षण बताए हैं। जातियों का मूल आधार यद्यपि जन संगीत था लेकिन वह नियमबद्ध था।

ग्राम दो माने जाते थे— षड्ज ग्राम व मध्यम ग्राम। षड्ज ग्राम की चार जातियाँ थीं— षाडजी, आर्षभी, गंधारी तथा मध्यमी। मध्यम ग्राम की तीन जातियाँ थीं— पंचमी, धैवती व नैषादी। हर जाति को गाते हुए आधार स्वर बदलता था। आज के युग की तरह आधार स्वर स्थायी नहीं था। *रामायण* में जातियों के विषय में वर्णित है कि जातिभीर्सप्तमिर्बद्धं तन्त्रीलय समन्वितम् अर्थात रामायण गान, सात जातियों से निबद्ध था तथा तंत्रीलय (तार से बने वाद्य द्वारा बजायी गई लयबद्ध धुन) से समन्वित था। लव और कुश के द्वारा गायी गई राम की गाथा स्वरबद्ध थी एवं शब्दों को भी उच्च कोटि का माना गया था।

आज के शास्त्रीय संगीत में क्या गांधर्व, जाति जैसे विषय किसी भिन्न नाम से जाने जाते हैं? उनके नाम क्या हैं?

रामायण में गांधर्व शब्द का भी उल्लेख है जिसके अंतर्गत गीत तथा वाद्य दोनों ही आते थे। इसमें पद और स्वर का महत्व है जो लोक रंजन के प्रसंग में है। इसमें स्वर का स्थान प्रमुख है। अन्य दो इसके विकास के आश्रित हैं। गांधर्व में स्वर, मूर्च्छना, पाठ्य, ताल, लय, जाति एवं रस के तत्व थे।

© NCERT not to be republished

राग शब्द *रामायण* में पाया गया है, टीकाकार रामानुजीय ने व्याख्या की है कि—"कैशिक रागविशेष: तदाचार्ये तुंबरू प्रभृतिभिरित्यर्थ:" जिसमें रामायण में पाए जाने वाली राग कैशिक का स्पष्टीकरण होता है। श्रीधर शरच्चन्द्र परांजपे अपनी *भारतीय संगीत का इतिहास* में लिखते हैं कि कैशिकी राग एक प्राचीन राग था जिसका उल्लेख नारदीय शिक्षा एवं *नाट्यशास्त्र* दोनों ग्रंथों में है।

उपरोक्त सभी प्रसंगों से यह स्पष्ट दिखता है कि राग के तत्व संगीत में यत्र-तत्र विराजमान थे। महाभारत काल में गीत, वाद्य एवं नृत्य समाज का अभिन्न अंग था। *रामायण* एवं *महाभारत* में साम गान का प्रयोग वैदिक आर्यों के दैनंदिन जीवन का अंश था। यज्ञ के अलावा जन्म तथा मृत्यु जैसे लौकिक प्रसंगों में भी साम गान किया जाता था। जाति के अलावा इस ग्रंथ में मूर्च्छना शब्द का प्रयोग मिलता है। मूर्च्छना का तात्पर्य स्वरों का एक निश्चित क्रम था जो आगे चलकर मेंल या मेंलकर्ता के अनुकूल पाया गया। मूर्च्छना को गाया-बजाया नहीं जाता था।

रामायण व महाभारत काल में सात शुद्ध जातियाँ थीं। भरत ने 11 और जातियों का विकास किया। यह स्वरों के विकृत और संकीर्ण रूप से बनाये गये। कुल मिलाकर भरत के समय में 18 जातियों का प्रचलन था।

?

1. *रामायण* में किन जातियों का उल्लेख किया गया है। जाति की रचना कैसे होती है?
2. *नाट्यशास्त्र* में लिखे श्लोक जो जाति के 10 लक्षणों का उल्लेख करते हैं, याद कीजिए एवं समूह में बोलिए।
3. *रामायण* में ग्राम शब्द से क्या अभिप्राय था?
4. *रामायण* में राग शब्द किस तरह प्रयोग किया गया है?
5. *महाभारत* काल में मूर्च्छना शब्द से क्या समझा जाता था।

नाटक के संदर्भ में *नाट्यशास्त्र* की रचना भरत मुनि द्वारा दूसरी से चौथी शताब्दी के बीच में हुई थी। ऐसा माना जाता है कि इसका संकलन *ऋग्वेद* के पाठ्य, *सामवेद* के संगीत, *यजुर्वेद* के अभिनय तथा *अथर्ववेद* के रस से समाहित किया गया अत: इसे '*नाट्यवेद*' भी कहा जाता हैं। इस *नाट्यवेद* में भरतमुनि ने 28वें अध्याय में संगीत के सप्त स्वरों की गणना प्रस्तुत की है—

"षडजश्च ऋषभश्चैव गन्धारो मध्यमस्तथा ।
पंचमो धैवतश्चैव सप्तमोऽय निषादवात्।।

***नाट्यशास्त्र*, 28/23**

अर्थात् *नाट्यशास्त्र* कालीन सप्त स्वरों के नाम इस प्रकार हैं— षड्ज, ऋषभ, गंधार, मध्यम, पंचम धैवत तथा निषाद।

© NCERT not to be republished

इसके उपरांत भरत मुनि कहते हैं कि सप्त स्वरों का क्रमिक विकास एवं गायन मूर्च्छना कहलाता है। इस विषय में एक महत्वपूर्ण बात है कि इस समय क्रमिक का अर्थ था अवरोहन में गाना। यह परंपरा साम गान से चली आ रही थी— आरोह-अवरोह में गाने की प्रथा सर्वप्रथम मतंग ने *बृहद्देशी* में बताई है।

षड्ज ग्राम की एक मूर्च्छना का उदाहरण

आरंभ स्वर	मूर्च्छना का नाम	स्वर रचना
स	उत्तरायता	स नि ध प म ग रे
ग	अश्वक्रान्ता	ग रे स नि ध प म

मध्यम ग्राम की एक मूर्च्छना का उदाहरण

आरंभ स्वर	मूर्च्छना का नाम	स्वर रचना
म	सोवोरी	म ग रे स नि ध प
नि	मार्गी	नि ध प म ग रे स

प्रोफ़ेसर प्रेमलता शर्मा लिखती हैं कि नाटक के संदर्भ में कुछ रागों का चयन किया जाता था वे 'ग्राम राग' कहलाते थे। इस तरह के कुछ विशिष्ट राग थे जिनका स्वरूप एवं नाट्य में प्रयोग नियमों के अनुसार निर्धारित था।

इन रागों को विभिन्न नाटकों के विषयों के अनुसार भाषा, विभाषा (बोली), अंतर्भाषा (बोलियों में भेद) के अनुसार विभक्त किया जाता था। इन रागों को गाने के विविध ढंग/प्रकार या निर्दिष्ट थे जो आगे विभिन्न तरह की गीतियों के अंतर्गत माने गए हैं। पाँच प्रकार की गीतियाँ प्रचलन में थीं, जो निम्न हैं—

शुद्धा सीधे परंतु अल्प अलंकृत

भिन्ना साधारणत: अलंकृत

गौड़ी पूर्णत: अलंकृत

बेसरा द्रुत

साधारणी साधारण रूप

शेष राग जो इन निर्दिष्ट नियमों के अंतर्गत नहीं आते थे, उनको 'देशी राग' कहा गया है। इनका आगे रागांग, भाषांग, उपांग, क्रियांग के अंतर्गत विभाजन हुआ।

© NCERT not to be republished

हम समझ सकते हैं कि राग की नींव सांगीतिक विधाओं से बनी। *नाट्यशास्त्र* में राग शब्द का बहुत कम प्रयोग किया गया है। *नाट्यशास्त्र* के 33वें अध्याय में मृदंगम् के संदर्भ में जाति, राग, तथा ग्राम राग का उल्लेख किया जाता है। ऐसा माना जाता है कि वही मृदंगम् वादन श्रेष्ठ है जो बोलों की विशदता, स्पष्ट प्रहार, रक्तिगुण आदि के साथ राग के स्वरूप को स्पष्ट करे।

नाट्यशास्त्र के 32वें अध्याय में 'ग्राम रागों' का स्पष्ट नाम निर्देश उपलब्ध है, जो इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि ग्राम रागों का प्रचलन *नाट्यशास्त्र* (जो लगभग पहली सदी में लिखा गया है) की रचना से पहले ही था।

नारद मुनि द्वारा रचित ग्रंथ *शिक्षा* (जोकि संगीत का एक अमूल्य ग्रंथ माना जाता है) में सात स्वरावलियों (स्केल) का उल्लेख किया गया है एवं उससे उत्पन्न सात ग्राम राग माने गये हैं।

चौथी-पाँचवीं शताब्दी में कश्यप मुनि ने राग की परिभाषा इस प्रकार दी है—

"चतुर्णामपि वर्णना योगा राग:शोभना"
स सर्वो दृष्यते येन तेन राग इति स्मृता:।

बृहद्देशी, तृतीयोऽध्याय:, श्लोक 283

यह श्लोक मतंग मुनि के ग्रंथ *बृहद्देशी* में दिया गया है अर्थात् चार वर्णों का योग राग को शोभनीय बनाता है, जो (चार वर्ण) राग में हर स्थान पर दिखाई देते हैं इसीलिए उसे राग कहा गया है।

इससे यह सिद्ध होता है कि मतंग मुनि से पहले कश्यप ने राग की परिभाषा दी थी। *बृहद्देशी* में मतंग मुनि ने रागों के लक्षण का सबसे पहले उल्लेख किया है।

राग शब्द की एक अन्य परिभाषा में मतंग मुनि के अनुसार—

"स्वर वर्ण विशेषेण ध्वनिभेदेन वा पुन :
रज्यते येन य: कश्चित सराग: समंत: सताम् ।"

बृहद्देशी, तृतीयोऽध्याय:, श्लोक 263

अर्थात् विशिष्ट स्वर वर्ण (गान क्रिया) से अथवा ध्वनि भेद के द्वारा जो जन-रंजन में समर्थ है, वह राग है। जिस तरह भरत ने जाति के 10 लक्षण माने थे मतंग मुनि ने भी उन्हीं 10 लक्षणों का अपने ग्रंथ में उल्लेख किया है।

© NCERT not to be republished

मतंग के पूर्ववर्ती विद्वानों में कल्लिनाथ ने राग के बारे में लिखा है—

"रागः रंजको जनचित्तानाम् स च राग उदाहृतः।"

बृहद्देशी, तृतीयोऽध्यायः,श्लोक 264

अर्थात् राग वह शब्द है जो मनुष्य के मन का रंजन करता है और हृदय को आनंदित करता है। मतंग मुनि एवं भरत के मतानुसार किसी भी राग में ग्रह, अंश, न्यास स्वरों से ही राग का स्वरूप बनता था। 'ग्रह' से राग का आरंभ 'न्यास' से समाप्ति और 'अंश' स्वर राग का प्रधान स्वर माना जाता था। आज यही अंश स्वर वादी के नाम से जाना जाता है।

संगीत के उपलब्ध ग्रंथों में *संगीत रत्नाकर* 13वीं शताब्दी में शार्ङ्गदेव द्वारा रचा गया। इन्होंने नाद से श्रुति की उत्पत्ति की बात कही है। 22 श्रुतियों के आधार पर स्वरों की श्रुतियाँ इस प्रकार मानी गई हैं— स-4, रे-3, ग-2, म-4, प-4, ध-3, नि-2 तीनों सप्तक मंद्र, मध्य तथा तार का भी उल्लेख है।

1.	तीव्रा	7.	कुमुद्वती	13.	मंदा	19.	रौद्री
2.	दयावती	8.	रंजनी	14.	रक्तिका	20.	प्रीति
3.	क्रोधा	9.	वज्रिका	15.	प्रसारिणी	21.	संदीपनी
4.	मार्जनी	10.	क्षिति	16.	रक्ता	22.	रम्या
5.	आलापिनी	11.	मदन्ती	17.	रोहिणी		
6.	उग्रा	12.	क्षोभिणी	18.	छंदोवती		

1. *नाट्यशास्त्र* की रचना किन ग्रंथों के संकलन से मानी जाती है?
2. *नाट्यशास्त्र* में दिया गया कौन सा श्लोक सातों स्वरों की पुष्टि देता है? याद करके समूह में बोलिए।
3. क्रमिक विकास में मूर्च्छना को गाने की पद्धति कैसी थी?
4. *नाट्यशास्त्र* में दिए गए पाँच प्रकार की गीति कैसी होती थी?
5. *नाट्यशास्त्र* के 32वें एवं 33वें अध्याय में संगीत की किन विशेष बातों का उल्लेख मिलता है।
6. कश्यप मुनि ने राग की परिभाषा क्या दी है?
7. मतंग मुनि ने राग के बारे में क्या-क्या कहा है— दो श्लोकों द्वारा व्यक्त कीजिए।
8. शार्ङ्गदेव ने 22 श्रुतियों में शुद्ध स्वर को कहाँ रखा है।

© NCERT not to be republished

शार्ङ्गदेव ने गान क्रिया को वर्णों के समान माना है। कल्लिनाथ के अनुसार गान क्रिया स्वर-विस्तार से संबंध रखती है। राग लक्षण में तीन तत्व और जोड़े गए जो सन्यास, विन्यास और अंतरमार्ग नाम से जाने जाते थे।

रागों के क्रमिक विकास में यह समझना आवश्यक है कि शुद्ध जाति रागों से मिश्रित जाति राग, इन दोनों जाति रागों से ग्राम राग और ग्राम राग से देशी राग का विकास हुआ।

संगीत रत्नाकर में श्रुति, स्वर, नाद, ग्राम, मूर्च्छना आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है। जातियों के साथ ग्राम रागों का विवरण मिलता है तथा कुल 264 रागों का विवरण है। 'गीतं वाद्यम् तथा नृत्य त्रयम् संगीतमुच्यते:' का बोध सर्वप्रथम शार्ङ्गदेव ने ही करवाया था।

राग वह शब्द है जिसका अर्थ है— ध्वनि की रंजकता, जो सभी जीवित प्राणियों में आनंद का संचार करे। शार्ङ्गदेव के अनुसार *देशी गान* संगीतज्ञों द्वारा कुछ विशिष्ट समूहों में बद्ध सृजनात्मक रचना है।

शास्त्रों में संगीत के लिए दो भेद दिए गए हैं—

अनिबद्ध जो ताल से मुक्त है।

निबद्ध जो ताल से बँधा हुआ है, इसमें स्वर, ताल और पद तीनों तत्व आवश्यक हैं। गान के तीन नाम मिलते हैं—प्रबंध, वस्तु और रूपक। प्रबंध महत्वपूर्ण हैं जो आज की बंदिशों की भाँति गाए जाते थे।

प्रबंधों का उल्लेख

(i) भरत के *नाट्यशास्त्र* में दो प्रबंध—ध्रुव और गीत।

(ii) मतंग ने 49 देशी प्रबंध।

(iii) शार्ङ्गदेव ने 75 प्रबंध।

वर्तमान काल में गाई जाने वाली ध्रुपद/ध्रुव पद निबद्ध प्रबंध गीति का प्रकार है। 14वीं शताब्दी में राजा मानसिंह तोमर ने इस शैली को पुनर्जीवित करवाया था। *आइन-ए-अकबरी*, जो अकबर के राज्य काल में अबुल फजल द्वारा लिखी गई थी, उसमें ध्रुव पद को देशी संगीत के अंतर्गत बताया गया है।

प्रबंध के छह अंग हैं जो इस प्रकार थे—

स्वर स रे ग म - - - सात स्वर

विरुद गीत के पात्रों का वर्णन (देवी, देवता, नायक इत्यादि)।,

पद शब्द

तेनक *ओम* तत सत ऐसे - - - - शब्दों का प्रयोग

पाट ताल के बोलों का उच्चारण

ताल समय को नापते हुए विभिन्न छंद एवं ताल

© NCERT not to be republished

प्रबंधों के चार धातु बताए गए—

उद्ग्राहक यह प्रबंध का प्रथम भाग था जो आज के स्थायी के समान है।

मेलापक यह रचना का दूसरा भाग है जो प्रबंध को पूरी तरह से प्रतिष्ठित करता था।

ध्रुव यह उद्ग्राहक और मेलापक में संबंध स्थापित करने वाला तृतीय भाग था।

आभोग प्रबंध को पूर्ण करने वाला चतुर्थ भाग।

स्वामी प्रज्ञानंद के अनुसार वह 'गीति' जो निबद्ध थी और जिसमें उद्ग्राहक, मेलापक, ध्रुव, आभोग के भाग थे और स्वर, पद, विरुद, तेनक, पाट और ताल नामक अंग थे, वह 'प्रबंध' नाम से जाना जाता था।

राग-रागिनी पद्धति

राग-रागिनी पद्धति का प्रार्दुभाव प्राचीन काल में हो चुका था। पुरुष एवं महिला के मूल चरित्रों के अनुसार रागों का विभाजन विद्वानों द्वारा किया गया जिसे मध्य कालीन संगीतज्ञों द्वारा भी माना गया। इसके मुख्यत: चार मत हैं— सोमेश्वर मत, कल्लिनाथ मत, हनुमान मत तथा भरत मत। हर एक मत के अनुसार छ: प्रधान राग तथा उनकी पाँच-पाँच या छह-छह रागिनियाँ मानी गईं। रागरागिनी के रूप में उपलब्ध चित्र (राग-माला चित्र) इन्हीं राग-रागिनियों के अनुसार विभिन्न चित्रकला की शैलियों में उपलब्ध हैं। इन चित्रों को आधार राग-ध्यान थे जो संस्कृत श्लोकों, हिंदी दोहों एवं पद्य के रूप में उपलब्ध हैं।

रागों का समय सिद्धांत

विष्णु नारायण भातखण्डे ने समय सिद्धांत के आधार पर रागों को वर्गीकृत करने की दृष्टि से उन्हें तीन वर्गों में विभाजित किया—

1. रे और ध शुद्ध वाले राग
2. रे और ध कोमल वाले राग
3. ग और नि कोमल वाले राग

नीचे इन्हीं तीन वर्गों को संक्षिप्त में दिया गया है—

रे और ध शुद्ध वाले राग— यह संधिप्रकाश राग के बाद गाए जाते हैं। प्रात:काल एवं रात दोनों समय के सात से दस बजे तक गाए जाने की परंपरा है। यमन, बिलावल, खमाज आदि राग इसी के अंतर्गत हैं।

रे और ध कोमल वाले राग— इन्हें संधिप्रकाश राग भी कहा गया है। इन रागों में रे-ध कोमल के साथ ग शुद्ध होना अनिवार्य है। दिन और रात की संधि, अर्थात् भोर (सुबह चार बजे से सात बजे तक) और सायंकाल (शाम के चार बजे से सात बजे तक), का समय संधि प्रकाश माना जाता है। इस समय गाए जाने वाले रागों के अंतर्गत भैरव, पूर्वी, मारवा आते हैं।

© NCERT not to be republished

ग और नि कोमल वाले राग— यह रात और दिन के दस बजे के बाद से तीन-चार बजे तक गाए जाते हैं, जैसे— आसावरी, जौनपुरी, वृंदावनी सारंग, मालकौंस, बागेश्री।

रागों के सैद्धांतिक नियम

समय सिद्धांत की दृष्टि से मध्यम की भूमिका— विष्णु नारायण भातखण्डे ने मध्यम स्वर की भूमिका महत्वपूर्ण मानी है। उनके अनुसार प्रात:कालीन संधिप्रकाश रागों में अधिकतर शुद्ध मध्यम का प्रयोग तथा सायंकालीन संधिप्रकाश रागों में तीव्र मध्यम के प्रयोग की प्रधानता रहती है। विष्णु भातखण्डे ने रागों को प्रस्तुत करने के लिए निम्नलिखित नियम दिए हैं—

1. राग की उत्पत्ति ठाठ से होती है।
2. राग में आरोह-अवरोह का होना आवश्यक है।
3. इसमें कम से कम पाँच स्वर होने चाहिए।
4. षड्ज स्वर का राग में होना अनिवार्य है।
5. म (मध्यम) एवं प (पंचम)— दोनों स्वरों में से एक का होना अनिवार्य है।
6. राग की विभिन्न जातियाँ हो सकती हैं औड्व (पाँच स्वर) षाड्व (छह स्वर) संपूर्ण (सात स्वर)
7. राग मधुर और सुरीला होना चाहिए।
8. राग में वादी संवादी होना आवश्यक है।
9. राग में पकड़ होना, जो उस राग का विशिष्ट स्वर समूह है, आवश्यक है।
10. राग में पूर्वांग एवं उतरांग की प्रधानता होती है।

थाट-राग पद्धति

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में थाट-राग पद्धति की मान्यता है। विष्णु नारायण भातखण्डे ने समस्त रागों को दस थाटों के अंतर्गत विभाजित किया। उन्हीं के सिद्धांतों के अनुसार इस पद्धति का प्रचलन एवं मान्यता वर्तमान समय में भी है। पंडित विष्णु नारायण भातखण्डे 'थाट पद्धति' को उत्तर भारतीय संगीत पद्धति में राग वर्गीकरण के लिए स्वीकार करने वाले व उसे क्रियात्मक संगीत में स्थापित करने वाले सर्वप्रथम आचार्य हैं। मध्य काल में प्रचलित मेंल वर्गीकरण के आधार पर ही आधुनिक युग में थाट-पद्धति का निर्माण किया गया। यद्यपि पंडित अहोबल के समय से ही इसके लिए प्रयत्न चलता रहा था और उसका सैद्धांतिक प्रतिपादन भी किया जाता रहा। परंतु क्रियात्मक संगीत में इन ग्रंथों की अनभिज्ञता के कारण इस पद्धति को स्थान न मिल पाया व मध्य काल में राग-रागिनी पद्धति का प्रयोग निरंतर चलता रहा।

© NCERT not to be republished

नाद से स्वर, स्वरों से सप्तक, सप्तक में शुद्ध तथा विकृत स्वर मिलाकर उत्तर भारतीय संगीत में 12 स्वर होते हैं। इन्हीं 12 स्वरों से थाटों की उत्पत्ति होती है। थाट, स्वरों के उस समूह को कहते हैं जिससे राग उत्पन्न होता है। थाट को ही संस्कृत में 'मेंल' कहते हैं। बारह (12) में से क्रमानुसार सात (7) स्वर ही लिए जाते हैं जिससे एक विशिष्ट थाट बनता है। थाट में विशेष बात यह है कि इसमें सप्तक के सातों स्वर क्रमानुसार होते हैं। सप्तक के शुद्ध तथा विकृत स्वरों में से प्रत्येक स्वर का कोई न कोई रूप थाट में अवश्य होना चाहिए। शास्त्रकारों के अनुसार —

मेंलः स्वरसमूहः स्याद्रागव्यंजन शक्तिमान

अभिनव राग मंजरी

अर्थात् वह स्वर समूह जिसमें राग उत्पन्न करने की शक्ति हो, वह मेंल या थाट कहलाता है। हम थाटों को जन्य-जनक भी कहते हैं।

14वीं शताब्दी में विद्यारण्य ने सर्वप्रथम मेल पद्धति की चर्चा की है परंतु इसे संगीत पद्धति के सैद्धांतिक रूप में लाने का श्रेय पं. वेंकटमखी को जाता है। इन्होंने गणित द्वारा मेंलों की अधिकतम संख्या निश्चित की व मेंल पद्धति को वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया। इसी सिद्धांत को आधार मानकर विष्णु भातखण्डे ने सहज एवं नवीन रूप प्रदान किया जो उत्तर भारतीय संगीत में थाट पद्धति के रूप में मान्य हैं।

19वीं शताब्दी के आरंभ में पटना निवासी मुहम्मद रजा ने पुस्तक *नगमत-ए-आसफी* लिखी जिन्होंने प्रथम बार राग बिलावल को शुद्ध सप्तक (स्केल) माना। पंडित विष्णु नारायण भातखण्डे भी इस बात से प्रभावित हुए। उन्होंने वेंकटमुखी के 72 मेंल में से 10 को चुना और ठाठ (थाट) नाम दिया जो इस प्रकार हैं— बिलावल, यमन, ख़माज, भैरव, भैरवी, तोड़ी, पूर्वी, मारवा, आसावरी, काफी ठाठ को 'सप्तक' भी कहा जाता है। इसमें जन्य-जनक भाव की मान्यता रही जिसमें इन दस ठाठों से विभिन्न रागों का जन्म होता है जो वर्तमान समय में भी प्रचलित हैं।

विष्णु नारायण भातखण्डे ने दस थाटों को इस प्रकार माना है—

यमन बिलावल और खमाजी, भैरव, पूर्वी मारवा काफ़ी।
आसा भैरवी तोड़ी बखाने, दशमित थाट चतुर्गुणी माने।।

क्रमिक पुस्तक मालिका

© NCERT not to be republished

क्र. सं	थाट के नाम	थाट के स्वरूप
1.	बिलावल	स रे ग म प ध नि सं
2.	कल्याण	सं रे ग म प ध नि सं
3.	खमाज	स रे ग म प ध नी सं
4.	काफ़ी	स रे ग म प ध नि सं
5.	आसावरी	स रे ग म प ध नि सं
6.	भैरव	स रे ग म प ध नि सं
7.	भैरवी	स रे ग म प ध नि सं
8.	पूर्वी	सं रे ग म प ध नि सं
9.	मारवा	सं रे ग म प ध नि सं
10.	तोड़ी	सं रे ग म प ध नि सं

थाट से अभिप्राय उस स्वर-समूह से है जिसमें राग उत्पन्न करने की क्षमता हो। एक सप्तक में शुद्ध-विकृत, कुल बारह स्वर होते हैं। इन बारह स्वरों में से ही सात स्वर लेकर उनसे थाट बनाए जाते हैं। थाट राग वर्गीकरण को सुचारू रूप से चलाने के लिए विष्णु भातखण्डे ने इस पद्धति के लिए कुछ नियम निर्धारित किए हैं जो निम्नलिखित हैं—

1. थाट सदैव संपूर्ण होता है अर्थात् सभी थाटों में सातों स्वर का प्रयोग अनिवार्य है। हमें ज्ञात है कि राग सात स्वर, छ: स्वर या पाँच स्वर किसी भी जाति से बन सकता है। थाट को जनक माना गया है और इसलिए विभिन्न जातियों के राग उत्पन्न करने के लिए उसमें सातों स्वरों का होना अनिवार्य है। थाट में लगने वाले स्वर भी क्रमयुक्त होने चाहिए। स्वरों के विकृत रूप उलट-पलट कर प्रयोग किये जा सकते हैं परंतु उनका क्रम सा, रे, ग, म, प ध, नि ही होना चाहिए।
2. थाट में आरोह-अवरोह दोनों का होना आवश्यक नहीं होता, थाट के लिए केवल आरोह की ही आवश्यकता होती है।
3. थाट में रंजकता का होना आवश्यक नहीं है।
4. थाट गाया-बजाया नहीं जाता।
5. यह एक आधार समान है जिससे अनेक रागों का जन्म संभव है। थाट स्वयं गाए-बजाए नहीं जाते। ऐसी मान्यता है कि थाट जननी है एवं इससे उत्पन्न होने वाले राग इसकी संतान जैसे हैं। इसे 'जनक-जन्य' पद्धति नाम से भी यह जाना जाता है।

© NCERT not to be republished

6. थाट को पहचानने के लिए उससे उत्पन्न किसी प्रमुख राग का नाम उस थाट को दे दिया जाता है। अधिकतर वह प्रमुख राग ही उस थाट का आश्रय राग बन जाता है।

आधुनिक समय में इन दस थाटों के ऊपर बहुत वाद-विवाद रहा है। विद्वान मानते हैं कि बहुत से राग ऐसे हैं जिनको इन (10) थाटों के अंतर्गत नहीं रख सकते। इसलिए इन थाटों की संख्या बढ़ाना आवश्यक प्रतीत हो रहा है। इस हेतु प्रयत्न भी किए जा रहे हैं परंतु अभी तक कोई सर्वमान्य समाधान नहीं निकल पाया है।

निबद्ध तथा अनिबद्ध

संगीत रत्नाकर ग्रंथ में गान के दो भेद निबद्ध व अनिबद्ध के बारे में बताया गया है। शार्ङ्गदेव के गायन या वादन में छंद, पद, वर्ण व ताल आदि के बंधन द्वारा गाए गान को 'निबद्ध' कहते हैं। अनिबद्धगान स्वत: स्फूर्त होता है। *संगीत रत्नाकर* में आलाप-आलप्ति द्वारा राग की स्थापना होती थी। उनके अनुसार वर्ण व अलंकार से विभूषित तथा गमक व स्थाय (विभिन्न प्रकार के स्वर समुदाय) आदि से परिपूर्ण गान जो सुनने में मधुर हो और जिन स्वर समुदायों से राग स्पष्ट हो, उसे 'आलप्ति' कहा गया है। आलप्ति के द्वारा अभिव्यक्ति भी दो तरह की थी— एक तो निबद्ध रचना यानि बंदिश (जिसमें पद ताल के साथ गाए जाते थे) और दूसरी, बंदिश गाने से पहले स्वर-विस्तार जो कि 'अनिबद्ध' कहा जाता था। 13वीं शताब्दी में इस अनिबद्ध भाग में भी बहुत से नियम थे। बंदिश की बढ़त करते हुए उसमें छंद व ताल आदि का बंधन होने के कारण ऐसे गायन या वादन को 'निबद्ध गान' तथा बंधन रहित होने के कारण आलप्ति को 'अनिबद्ध' की संज्ञा दी गई है।

संगीत में स्वर एवं ताल का समावेश है इसको गाने बजाने के लिए अलाप, सरगम, बंदिश, तान इत्यादि से सजाया व सँवारा जाता है। अधिकतर बंदिश या कोई भी विधा, जैसे— ध्रुपद, ख्याल, ठुमरी इत्यादि गाने से पहले आलाप किया जाता है। यह आलाप स्वरबद्ध होता है एवं राग को प्रतिपादित करने के लिए गाया जाता है यही आलाप 'अनिबद्ध गान' कहलाता है। प्राचीन काल में आलाप के दो प्रकार माने जाते थे— रागालाप और रूपकालाप। आलाप को गाने के लिए स्वस्थान नियम का पालन किया जाता था जिसके चार चरण थे। प्रथम चरण में स्थायी स्वर का प्रयोग करते हुए आलाप किया जाता था। द्वितीय चरण में स्थायी स्वर के साथ उससे 4 या 5 स्वरों के अंतर पर स्थापित स्वर, जिसे 'द्वयर्ध' स्वर कहा जाता था, का प्रयोग भी करते हुए आलाप किया जाता था। तृतीय चरण में स्थायी स्वर में आठवें स्वर यानि दोगुना ऊँचे स्वर जिसे 'द्विगुण' स्वर कहा जाता था, उसका भी प्रयोग करते हुए आलाप किया जाता था। चतुर्थ चरण में स्थायी स्वर से नीचे का द्विगुण स्वरों से ऊपर अर्थात् राग के समस्त स्वरों व सप्तकों का प्रयोग किया जाता था। इसके पश्चात् आलाप्ति के भी दो भाग थे— रागाप्ति व रूपकालप्ति। रागालाप

© NCERT not to be republished

आज भी प्रचलन में है इसको राग के नियमों के अनुसार, जैसे— ग्रह, अंश, न्यास, अल्पत्व, बहुत्व, जाति के अनुसार गाया-बजाया जाता है। राग के स्वरूप को पहचानने के लिए यह अति लाभदायक है। रूपकालाप, आलप्तिगान एवं स्वस्थान नियम वर्तमान में प्रचलन में नहीं हैं। यह संगीत तालबद्ध होता है, इसे निबद्ध गान कहा जाता है— निबद्ध अर्थात् विशिष्ट स्वर व ताल के अनुसार अभिव्यक्ति। सभी विधाएँ, जैसे— ध्रुपद, धमार, ख्याल, टप्पा, ठुमरी, कजरी, भवन तराना आदि निबद्ध गान के अंतर्गत आती हैं। निबद्ध गान में एक अद्भुत सौंदर्य की सृष्टि देखी जाती है। विशिष्ट मात्राओं की तालों में जब अलग-अलग बंदिशें गाई-बजाई जाती हैं तो वह मन को प्रसन्न करती हैं। यह सौंदर्य स्वर और लय द्वारा अभिव्यक्ति है।

वर्तमान युग में भी निबद्ध और अनिबद्ध के रूप हम राग गायकी में पाते हैं। बच्चों राग गाते समय स्वयं ही तय करना कि आप किस भाग को निबद्ध व किसको अनिबद्ध की श्रेणी में रखेंगे।

सारांश

राग शब्द हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत में सबसे महत्वपूर्ण है। गायकी में प्राचीन काल से किए गए विभिन्न क्रियाकलाप राग में निबद्ध है। विभिन्न काल में गायकी में शोध के कारण सिद्धांत अलग-अलग बनते रहे, जैसे— ग्राम से जाति, जाति से राग। इन्हीं स्वर समूह को अलग-अलग तरह से गाया बजाया गया। जिसके कारण स्वर ग्राम मूच्छना पद्धति राग-रागिनी पद्धति, थार पद्धति इत्यादि प्रचलन में रहे। सातवीं शताब्दी से सभी संगीत जो राग शब्द का व्यवहार किया और गायन के विभिन्न तत्वों को संजोकर गायन शैलियों का विकास किया।

कुछ विशेष शब्द

शुद्ध स्वर, कोमल स्वर, वादी, संवादी, अनुवादी, विवादी थाट-थाट-राग पद्धति द्रुत ख्याल, विलंबित ख्याल, षड्ज ग्राम, मध्यम ग्राम, निबद्ध, अनिबद्ध

© NCERT not to be republished

भारतीय संगीत में प्रथम

भारत में पहला संगीत विद्यालय पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर द्वारा स्थापित किया गया था। सर्वप्रथम उन्होंने 5 मई 1901 को लाहौर में 'गंधर्व महाविद्यालय' नामक संगीत विद्यालय की स्थापना की। तदोपरांत 1908 में जब वे मुंबई आए तब लाहौर में स्थित संगीत विद्यालय को मुंबई स्थानांतरित कर दिया गया।

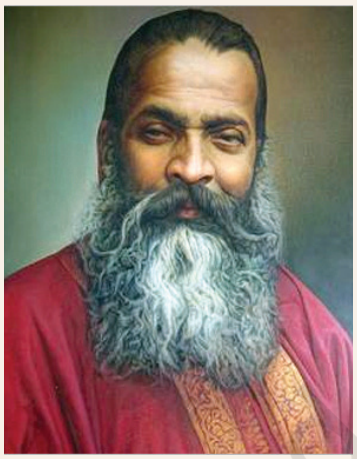

चित्र 5.1– पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर

अभ्यास

इस पाठ को आप पढ़ चुके हैं। आइये, नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास करें–

1. गान के दो भेद कौन से हैं?
2. *रामायण* के समय कौन से ग्राम राग थे?
3. मार्गी संगीत को विस्तार से समझाइए।
4. जातियों से क्या अभिप्राय था?
5. देशी संगीत के प्रचलित होने के क्या प्रमुख कारण हैं? अपने शब्दों में बताइए।
6. महाभारत के समय मूर्च्छना से क्या अभिप्राय था?
7. प्राचीन काल में निम्नलिखित स्वरों के लिए प्रयुक्त की गई शब्दावली बताइए—
   (क) दो स्वर (ख) एक स्वर (ग) तीन स्वर (घ) चार स्वर
8. मार्गी-देशी संगीत के अंतर को स्पष्ट कीजिए।
9. देशी संगीत से आप क्या समझते हैं? विस्तारपूर्वक समझाइए।
10. थाट-राग पद्धति किस पद्धति के सिद्धांतों पर आधारित है?
11. थाट और राग के भेद को स्पष्ट कीजिए।

© NCERT not to be republished

12. मेंल स्वर समूह स्याद्रागण्जन्यशक्तिमानं श्लोक का अर्थ समझाइए।
13. ख्याल गायन में अनिबद्ध गान का प्रयोग कहाँ पर होता है? समझाइए।
14. हर राग सात स्वरों से रचित होने के बावजूद भिन्न सुनाई देता है, इस बात की पुष्टि कीजिए।
15. थाट-राग वर्गीकरण के नियमों को विस्तार से बताइए।
16. निबद्ध-अनिबद्ध गान से आप क्या समझते हैं? विस्तार से समझाइए।
17. आपके अनुसार संगीत की विभिन्न शैलियाँ ध्रुपद, धमार, टप्पा, ठुमरी आदि किसके अंतर्गत आती हैं— निबद्ध अथवा अनिबद्ध? अपने शब्दों में लिखिए।
18. निबद्ध गान में ताल के महत्व पर प्रकाश डालिए।
19. आलाप के प्राचीन एवं आधुनिक सिद्धांतों के भेद को अपने शब्दों में लिखिए।
20. थाट-राग पद्धति को विस्तार से समझाइए।

सही या गलत बताइए—

1. गान के तीन भेद माने गए हैं। (सही/गलत)
2. विभिन्न स्थान की जनरुचि के अनुरूप हृदय का रंजन करने वाले संगीत को मार्गी संगीत कहते हैं। (सही/गलत)
3. ध्रुपद, स्वरमालिका, त्रिवट आदि सांगीतिक रचनाएँ देशी संगीत में ही समन्वित हैं। (सही/गलत)
4. मार्गी संगीत में शास्त्रोक्त नियमों का दृढ़ता से पालन नहीं होता। (सही/गलत)

रिक्त स्थानों (श्लोकों) की पूर्ति कीजिए—

1. रंजको _____ स च _____।
2. जातिभीः _____ समन्वितम्
3. षड़जश्र ऋषभश्चैव _____।
4. पंचमो _____ निषादः सप्त च स्वरः।
5. ग्रहांशौ तारमंद्रो च _____ एवं च।
6. निम्नलिखित श्लोकों को पूरा कीजिए तथा भावार्थ लिखिए—
   (क) मार्गोदेशीति _____ भरतादिभिः।।
   (ख) देशे-देशे _____ तद्देशीत्यभिधीयते।।

© NCERT not to be republished

7. निम्न तालिका में रिक्त स्थानों पर थाटों के नाम व शुद्ध एवं कोमल स्वर लिखिए—

थाट	स्वर
बिलावल	स ———— ग म ————
————	स रे ग म प ध नि सं
भैरव	स रे ———— नि सं
खमाज	स ———— सं
————	स रे ग म प ध नि सं
आसावरी	स ———— म प ———— सं
————	स रे ग म प ध नि सं
मारवा	———— रे ————
पूर्वी	———— ध नि सं
भैरवी	————

© NCERT not to be republished